प० 19 (3)

इकाई 2

(अ) गद्यांश अर्थग्रहण पर आधारित प्रश्नोत्तर

11. भक्तिन

— *महादेवी वर्मा*

अर्थग्रहण संबंधी प्रश्नोत्तर

1. छोटे कद और दुबले शरीरवाली भक्तिन अपने पतले ओठों के कोनों में दृढ़ संकल्प और छोटी आँखों में एक विचित्र समझदारी लेकर जिस दिन पहले-पहले मेरे पास आ उपस्थित हुई थी तब से आज तक एक युग का समय बीत चुका है। पर जब कोई जिज्ञासु उससे इस संबंध में प्रश्न कर बैठता है, तब वह पलकों को आधी पुतलियों तक गिराकर और चिंतन की मुद्रा में ठुड्डी को कुछ ऊपर उठाकर विश्वास भरे कंठ से उत्तर देती है—'तुम पचै का का बताई-यहै पचास बरिस से संग रहित है।' इस हिसाब से मैं पचहत्तर की ठहरती हूँ और वह सौ वर्ष की आयु भी पार कर जाती है, इसका भक्तिन को पता नहीं। पता हो भी, तो संभवतः वह मेरे साथ बीते हुए समय में रत्ती भर भी कम न करना चाहेगी। मुझे तो विश्वास होता जा रहा है कि कुछ वर्ष और बीत जाने पर वह मेरे साथ रहने के समय को खींच कर सौ वर्ष तक पहुँचा देगी, चाहे उसके हिसाब से मुझे डेढ़ सौ वर्ष की असंभव आयु का भार क्यों न ढोना पड़े।

(1) भक्तिन का व्यक्तित्व कैसा था ?

(2) भक्तिन किसी भी प्रश्न का जवाब किस प्रकार देती थी ?

(3) भक्तिन के अनुसार लेखिका और उसके बीच का संबंध कितने समय से है ?

(4) एक युग करोड़ों वर्षों का होता है फिर लेखिका ने ऐसा क्यों कहा कि "जिस दिन पहले-पहले मेरे पास आ उपस्थित हुई थी तब से आज तक एक युग का समय बीत चुका है।"

(5) लेखिका कौन है ? यह किस विधा की रचना है ?

उत्तर—(1) भक्तिन छोटे कद और दुबले पतले शरीर वाली ओठों पर दृढ़ संकल्प और आँखों में विचित्र समझदारी से युक्त व्यक्तित्व की थी।

(2) भक्तिन किसी भी प्रश्न का जवाब देते समय नारी सुलभ लज्जा व्यक्त करके पलकों को झुकाकर, सोच की मुद्रा में ठुड्डी को ऊपर उठाकर पूर्ण आत्मविश्वास से अपनी बात कहती थी।

(3) भक्तिन के अनुसार लेखिका और उसके बीच का संबंध पचास वर्षों का है।

(4) " जिस दिन पहले-पहले मेरे पास आ उपस्थित हुई थी तब से आज तक एक युग का समय बीत चुका है" लेखिका ने ऐसा इसलिए कहा क्योंकि भक्तिन के अनुसार उनके बीच का संबंध पचास वर्षों का है उस हिसाब से लेखिका पचहत्तर की और स्वयं भक्तिन सौ वर्ष की आयु को पार कर जाती है कुछ वर्षों बाद ऐसी अतिश्योक्ति उक्ति से भक्तिन ; लेखिका को डेढ़ सौ वर्षों की असंभव आयु तक पहुँचा सकती है।

(5) लेखिका महादेवी वर्मा जी हैं। यह गद्य की रेखाचित्र विधा है।

2. सेवक-धर्म में हनुमान जी से स्पर्द्धा करने वाली भक्तिन किसी अंजना की पुत्री न होकर एक अनामधन्या गोपालिका की कन्या है-नाम है लछमिन अर्थात लक्ष्मी। पर जैसे मेरे नाम की विशालता मेरे लिए दुर्वह है, वैसे ही लक्ष्मी की समृद्धि भक्तिन के कपाल की कुंचित रेखाओं में नहीं बँध सकी। वैसे तो जीवन में प्रायः सभी को अपने-अपने नाम का विरोधाभास लेकर जीना पड़ता है ; पर भक्तिन बहुत

Scanned with CamScanner

3. पिता का उस पर अगाध प्रेम होने के कारण स्वभावतः ईर्ष्यालु और संपत्ति की रक्षा में सतर्क विमाता ने उनके मरणांतक रोग का समाचार तब भेजा, जब वह मृत्यु की सूचना भी बन चुका था। रोने-पीटने के अपशकुन से बचने के लिए सास ने भी उसे कुछ न बताया। बहुत दिन से नैहर नहीं गई, सो जाकर देख आवे, यही कहकर और पहना-उढ़ाकर सास ने उसे विदा कर दिया। इस अप्रत्याशित अनुग्रह ने उसके पैरों में जो पंख लगा दिए थे, वे गाँव की सीमा में पहुँचते ही झड़ गए। 'हाय लछमिन अब आई' की अस्पष्ट पुनरावृत्तियाँ और स्पष्ट सहानुभूतिपूर्ण दृष्टियाँ उसे घर तक ठेल ले गईं। पर वहाँ न पिता का चिन्ह शेष था, न विमाता के व्यवहार में शिष्टाचार का लेश था। दुख से शिथिल और अपमान से जलती हुई वह उस घर में पानी भी बिना पिए उलटे पैरों ससुराल लौट पड़ी। सास को खरी-खोटी सुनाकर उसने विमाता पर आया हुआ क्रोध शांत किया और पति के ऊपर गहने फेंक-फेंककर उसने पिता के चिर विछोह की मर्मव्यथा व्यक्त की।

(1) विमाता ने पिता की बीमारी का समाचार क्यों नहीं भेजा ?

(2) भक्तिन को उसकी सास ने क्या कहकर मायके भेजा ?

(3) "अप्रत्याशित अनुग्रह ने उसके पैरों में जो पंख लगा दिए थे" का आशय स्पष्ट कीजिए।

(4) गाँव में पहुँचते ही भक्तिन के आशा के पंख क्यों झड़ गए ?

(5) भक्तिन के प्रति विमाता का व्यवहार कैसा था ?

(6) भक्तिन उल्टे पैर ससुराल क्यों लौट आई ?

(7) भक्तिन ने अपना क्रोध और पितृशोक कैसे व्यक्त किया ?

उत्तर—(1) भक्तिन की विमाता भक्तिन से इर्ष्या करती थी। उसे भय था कि पिता की संपत्ति पर भक्तिन एकाधिकार न कर ले अतः उसने पिता की मृत्यु का समाचार नहीं भेजा।

(2) भक्तिन को उसकी सास ने यह कहकर मायके भेजा कि वह बहुत दिनों से अपने मायके पिता को देखने नहीं गई है अतः जाकर उन्हें देख आए।

(3) "अप्रत्याशित अनुग्रह ने उसके पैरों में जो पंख दिए थे।" का आशय है कि आशा के विपरीत जब भक्तिन को मायके जाने का आग्रह किया जाता है तब खुशी से उसके पैरों में तेजी आ जाती है।

(4) गाँव में पहुँचते ही भक्तिन को गाँव की महिलाएँ सहानुभूति व्यक्त करते हुए कहने लगी कि "हाय लछमिन अब आई" इस वाक्य की पुनरावृत्तियों से उसे किसी अनिष्ट का संकेत देने लगे और उसके आशा के पंख झड़ गए।

(5) भक्तिन के प्रति विमाता का व्यवहार शिष्टाचारपूर्ण न था।

(6) भक्तिन पिता की मृत्यु के दुख से शिथिल और विमाता के अपमान से व्यथित होकर उल्टे पैर ससुराल लौट आई।

(7) भक्तिन ने सास को खरी-खोटी सुनाकर अपना क्रोध और पति के ऊपर गहने फेंक-फेंककर पितृशोक को व्यक्त किया।

4. जीवन के दूसरे परिच्छेद में भी सुख की अपेक्षा दुख ही अधिक है। जब उसने गेहुँए रंग और बटिया जैसे मुख वाली पहली कन्या के दो संस्करण और कर डाले तब सास और जिठानियों ने ओठ बिचकाकर उपेक्षा प्रकट की। उचित भी था, क्योंकि सास तीन-तीन कमाऊ वीरों की विधात्री बनकर मचिया के ऊपर विराजमान पुरखिन के पद पर अभिषिक्त हो चुकी थी और दोनों जिठानियाँ काक-भुशंडी जैसे काले लालों की क्रमबद्ध सृष्टि करके इस पद के लिए उम्मीदवार थीं। छोटी बहू के लीक छोड़कर चलने के कारण उसे दंड मिलना आवश्यक हो गया।

जिठानियाँ बैठकर लोक-चर्चा करतीं और उनके कलूटे लड़के धूल उड़ाते ; वह मट्ठा फेरती, कूटती, पीसती, राँधती और उसकी नन्ही लड़कियाँ गोबर उठातीं, कंडे पाथतीं। जिठानियाँ अपने भात पर सफेद राब रखकर गाढ़ा दूध डालतीं और अपने लड़कों को औटते हुए दूध पर से मलाई उतारकर खिलातीं। वह काले गुड़ की डली के साथ कठौती में मट्ठा पाती और उसकी लड़कियाँ चने-बाजरे की घघरी चबातीं।

Scanned with CamScanner

प्रश्न—(1) भक्तिन को अपनी सास और जिठानियों की उपेक्षा का पात्र क्यों बनना पड़ा ?
(2) भक्तिन की जिठानियाँ किस पद की उम्मीदवार बनीं और कैसे ?
(3) छोटी बहू कौन थी ? वह कौन-सी लीक छोड़कर चली ?
(4) काक-भुशंडी का क्या तात्पर्य है ? इसकी उपमा से किन्हे नवाजा गया ?
(5) छोटी बहू के लिए दंड स्वरूप क्या निर्धारित किया गया ?
(6) जिठानियों का रहन-सहन कैसा था ?
(7) भक्तिन और उसकी बेटियों को कैसे गुजारा करना पड़ता था ?

उत्तर—(1) भक्तिन को पहली कन्या के दो संस्करण और कर डालने अर्थात् तीन पुत्रियों को जन्म देने के कारण उपेक्षा का पात्र बनना पड़ा।

(2) भक्तिन की जिठानियाँ पुरखिन के पद की उम्मीदवार थीं क्योंकि उन्होंने सास का अनुकरण करते हुए पुत्रों की क्रमबद्ध सृष्टि कर डाली थी।

(3) छोटी बहू भक्तिन थी। वह अपनी सास और जिठानियों की पुत्र पैदा करने की लीक छोड़कर तीन पुत्रियों को जन्म दे डाली।

(4) काक-भुशंडी का तात्पर्य है 'कौआ' इसकी उपमा जिठानियों के बेटों को दी गई क्योंकि वे कौआ की तरह काले-कलूटे थे।

(5) छोटी बहू को दंड स्वरूप घर के सारे काम कूटना, पीसना, राँधना, मट्ठा फेरना और उसकी लड़कियों को गोबर उठाकर कंडे बनाना पड़ता था।

(6) जिठानियाँ सारा दिन लोक चर्चा (बातचीत) करने में व्यस्त रहती थीं और भोजन में भात सफेद राब के साथ गाढ़ा दूध डालकर खाती थीं।

(7) भक्तिन और उसकी बेटियों को काले गुड़ की डली के साथ मट्ठा और चने-बाजरे की घुघरी चबा कर ही गुजारा करना पड़ता था।

5. युद्ध को देश की सीमा में बढ़ते देख जब लोग आतंकित हो उठे, तब भक्तिन के बेटी-दामाद उसके नाती को लेकर बुलाने आ पहुँचे ; पर बहुत समझाने-बुझाने पर भी वह उनके साथ नहीं जा सकी। सबको वह देख आती है ; रुपया भेज देती है ; पर उनके साथ रहने के लिए मेरा साथ छोड़ना आवश्यक है ; जो संभवतः भक्तिन को जीवन के अंत तक स्वीकार न होगा।

जब गत वर्ष युद्ध के भूत ने वीरता के स्थान में पलायन-वृत्ति जगा दी थी, तब भक्तिन पहली ही बार सेवक की विनीत मुद्रा के साथ मुझसे गाँव चलने का अनुरोध करने आई। वह लकड़ी रखने के मचान पर अपनी नयी धोती बिछाकर मेरे कपड़े रख देगी, दीवाल में कीलें गाड़कर और उन पर तख्ते रखकर मेरी किताबें सजा देगी, धान के पुआल का गोंदरा बनवाकर और उस पर अपना कंबल बिछाकर वह मेरे सोने का प्रबंध करेगी। मेरे रंग, स्याही आदि को नयी हँडियों में सँजोकर रख देगी और कागज-पत्रों को छींके में यथाविधि एकत्र कर देगी।

प्रश्न—(1) भक्तिन को ले जाने कौन आए और क्यों ?
(2) भक्तिन अपने बेटी दामाद के साथ गाँव क्यों नहीं गई ?
(3) भक्तिन लेखिका से क्या अनुरोध करने लगी ?
(4) गाँव में लेखिका के आराम करने का प्रबंध भक्तिन किस प्रकार करना चाहती थी ?
(5) लेखन सामग्रियों को रखने के लिए भक्तिन ने क्या व्यवस्था की ?

उत्तर—(1) भक्तिन को ले जाने उसके बेटी-दामाद और नाती आए थे क्योंकि वे युद्ध को देश की सीमा में बढ़ते देखकर आतंकित हो उठे थे।

(2) भक्तिन लेखिका का साथ जीवन के अंत तक नहीं छोड़ना चाहती थी अतः वह उनके साथ नहीं गई।

(3) भक्तिन गत वर्ष के युद्ध के भूत की वीरता के स्थान पर पलायनवृत्ति को जानती थी अतः वह लेखिका से गाँव चलने का अनुरोध करने लगी।

Scanned with CamScanner

(4) गाँव में लेखिका के आराम के प्रबंध के लिए भक्तिन ने धान के पुआल का गोंदरा बनाकर उस पर अपना कंबल बिछाना चाहती थी।

(5) लेखन सामग्रियों को भक्तिन ने रंग, स्याही आदि को नयी हँडियों में संजोकर रखने और कागज पत्रों को छींके में यथाविधि एकत्र करने की व्यवस्था की।

6. भक्तिन और मेरे बीच में सेवक-स्वामी का संबंध है, यह कहना कठिन है ; क्योंकि ऐसा कोई स्वामी नहीं हो सकता, जो इच्छा होने पर भी सेवक को अपनी सेवा से हटा न सके और ऐसा कोई सेवक भी नहीं सुना गया, जो स्वामी के चले जाने का आदेश पाकर अवज्ञा से हँस दे। भक्तिन को नौकर कहना उतना ही असंगत है, जितना अपने घर में बारी-बारी से आने-जाने वाले अँधेरे-उजाले और आँगन में फूलने वाले गुलाब और आम को सेवक मानना। वे जिस प्रकार एक अस्तित्व रखते हैं, जिसे सार्थकता देने के लिए ही हमें सुख-दुख देते हैं, उसी प्रकार भक्तिन का स्वतंत्र व्यक्तित्व अपने विकास के परिचय के लिए ही मेरे जीवन को घेरे हुए है।

प्रश्न—(1) भक्तिन और लेखिका के पारस्परिक संबंधों को सेवक-स्वामी का संबंध क्यों नहीं कहा जा सकता है ?

(2) लेखिका और भक्तिन के संबंधों की तुलना किनसे की गई है ?

(3) भक्तिन की किन विशेषताओं का पता चलता है इस गद्यांश के माध्यम से लिखिए।

(4) ''भक्तिन का स्वतंत्र व्यक्तित्व अपने विकास के परिचय के लिए ही मेरे जीवन को घेरे हुए है'' आशय स्पष्ट कीजिए।

(5) अवज्ञा का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—(1) भक्तिन और लेखिका के पारस्परिक संबंधों को सेवक-स्वामी का संबंध नहीं कहा जा सकता, क्योंकि दोनों का जीवन-एक दूसरे के बिना अधूरा जान पड़ता है। एक ओर जहाँ भक्तिन को अपनों सा आश्रय देने वाली संरक्षण करने वाली मालकिन (नौकरी) की जरूरत थी वहीं लेखिका को भी उसकी घरेलू जिम्मेदारियों को संभालने वाले विश्वासपात्र की जरूरत थी। दोनों एक-दूसरे के प्रति प्रेम और निष्ठा का भाव रखने लगे थे अत: सेवक-स्वामी कहना उचित न होगा।

(2) लेखिका और भक्तिन की तुलना अँधेरे-उजाले और आँगन में फूलने वाले गुलाब और आम से की गई है।

(3) भक्तिन परम स्वामीभक्त थी। वह स्वामी (लेखिका) पर पूरा अधिकार के साथ सेवक धर्म का पालन करती थी और उनकी दिनचर्या के अनुरूप उनकी मदद एवं देखभाल के लिए तत्पर रहती थी।

(4) लेखिका के अनुसार भक्तिन की स्वतंत्र विचारधारा उसे लेखिका के साथ उत्तरोतर विकास करने एवं तरक्की करने में मददगार रहा जो न केवल उसके लिए अपितु महादेवी जी के लिए भी वह उनकी जरूरत बन गई और परछाई की तरह उनके साथ रही।

(5) अवज्ञा अर्थात् आदेश का पालन न करना।

7. मेरे परिचितों और साहित्यिक बंधुओं से भी भक्तिन विशेष परिचित है ; पर उनके प्रति भक्तिन के सम्मान की मात्रा, मेरे प्रति उनके सम्मान की मात्रा पर निर्भर है और सद्भाव उनके प्रति मेरे सद्भाव से निश्चित होता है। इस संबंध में भक्तिन की सहजबुद्धि विस्मित कर देने वाली है।

वह किसी को आकार-प्रकार और वेश-भूषा से स्मरण करती है और किसी को नाम के अपभ्रंश द्वारा। कवि और कविता के संबंध में उसका ज्ञान बढ़ा है ; पर आदर-भाव नहीं। किसी के लंबे बाल और अस्त-व्यस्त वेश-भूषा देखकर वह कह उठती है—'का ओहू कवित्त लिखे जानत हैं' और तुरंत ही उसकी अवज्ञा प्रकट हो जाती है—तब ऊ कुच्छौ करिहैं-धरिहैं ना-बस गली-गली गाउत-बजाउत फिरिहैं।

प्रश्न—(1) गद्यांश में भक्तिन की बुद्धि को विस्मित कर देने वाली क्यों कहा गया है ?

(2) भक्तिन कवियों की पहचान किस प्रकार करती थी ?

(3) भक्तिन की कवियों के प्रति कैसी मानसिकता थी ?

Scanned with CamScanner

उत्तर— (1) बाज़ार के जादू की तुलना चुम्बक और लोहे से की गई है। लोहा चुम्बक की चुम्बकीय शक्ति से आकर्षित होकर उस पर चिपक जाता है उसी प्रकार लोग बाज़ार के जादू से उसकी ओर स्वत: ही खींचे चले जाते हैं।

(2) बाज़ार का जादू जब जेब भरी हो और मन खाली हो तब तो चलता है किंतु जब जेब खाली हो और मन भरा न हो तब भी बाज़ार का जादू चल जाता है।

(3) बाज़ार के जादू का असर उतरने पर पता चलता है कि कैसी चीज़ें बहुतायत आराम नही देतीं आराम में खलल डालती हैं।

(4) जादू की जकड़ से बचने का एक मात्र उपाय है कि जब मन खाली हो तो बाज़ार न जाए।

(5) आवश्यकता की चीजें खरीदने के समय काम आने से बाज़ार की कृतार्थता होगी।

(6) लू का लूपन तब व्यर्थ हो सकता है जब हम गर्मी में लू के समय घर से बाहर निकलें तो पानी पीकर निकलें इससे लू का असर सीधे आंतरिक अंगों पर नहीं पड़ेगा और पानी की ठंडकता लू के प्रभाव को निष्क्रिय कर देगा।

2. बाज़ार को सार्थकता भी वही मनुष्य देता है जो जानता है कि वह क्या चाहता है। और जो नहीं जानते कि वे क्या चाहते हैं, अपनी 'पर्चेजिंग पावर' के गर्व में अपने पैसे से केवल एक विनाशक शक्ति- शैतानी शक्ति, व्यंग्य की शक्ति ही बाज़ार को देते हैं। न तो वे बाज़ार से लाभ उठा सकते हैं, न उस बाज़ार को सच्चा लाभ दे सकते हैं। वे लोग बाज़ार का बाज़ारूपन बढ़ाते हैं। जिसका मतलब है कि कपट बढ़ाते हैं। कपट की बढ़ती का अर्थ परस्पर में सद्भाव की घटी। इस सद्भाव के ह्रास पर आदमी आपस में भाई-भाई और सुहृद और पड़ोसी फिर रह ही नहीं जाते हैं और आपस में कोरे ग्राहक और बेचक की तरह व्यवहार करते हैं। मानो दोनों एक-दूसरे को ठगने की घात में हों। एक की हानि में दूसरे का अपना लाभ दिखता है और यह बाज़ार का, बल्कि इतिहास का; सत्य माना जाता है ऐसे बाज़ार को बीच में लेकर लोगों में आवश्यकताओं का आदान-प्रदान नहीं होता; बल्कि शोषण होने लगता है तब कपट सफल होता है, निष्कपट शिकार होता है। ऐसे बाज़ार मानवता के लिए विडंबना हैं और जो ऐसे बाज़ार को पोषण करता है, जो उसका शास्त्र बना हुआ है; वह अर्थशास्त्र सरासर औंधा है वह मायावी शास्त्र है वह अर्थशास्त्र अनीति-शास्त्र है।

प्रश्न—(1) बाज़ार का बाजारूपन कौन लोग बढ़ाते हैं ?

(2) किस कारण व्यक्ति कोरे ग्राहक और बेचक बन जाते हैं ?

(3) कपट कब सफल होता है ?

(4) अर्थशास्त्र अनीति शास्त्र कब बन जाता है ?

(5) बाज़ार की सार्थकता कब होती है ?

उत्तर—(1) पर्चेजिंग पावर की शक्ति रखने वाले लोग जो नहीं जानते कि बाज़ार में क्या लेना है ऐसे लोग बाज़ार का सच्चा लाभ न तो उठा पाते हैं न बाज़ार को देते हैं। ऐसे ही लोग बाज़ार का बाज़ारूपन बढ़ाते हैं।

(2) बाज़ार के बाज़ारूपन से कपट बढ़ता है और सद्भाव का ह्रास होता है। ऐसे में सद्भाव की कमी के ही कारण व्यक्ति कोरे ग्राहक और बेचक बन जाते हैं।

(3) जब ग्राहक और बेचक के बीच लाभ-हानि का भाव हो, एक-दूसरे को ठगने की बात हो तब आवश्यकताओं का आदान-प्रदान न होकर शोषण होने लगता है तब कपट सफल होता है।

(4) जब बाज़ार में कपट सफल हो जाता है और निष्कपट शिकार होता है तब अर्थशास्त्र अनीति शास्त्र बन जाता है।

(5) बाज़ार की सार्थकता तब है जब हम बाज़ार से सच्चा लाभ उठा कर उसे सच्चा लाभ दे सकें। यह तभी संभव है जब हमें मालूम हो कि वास्तव में हमें बाज़ार से क्या खरीदना है। बाज़ार हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए है ना कि व्यर्थ खरीददारी के लिए।

Scanned with CamScanner

14. पहलवान की ढोलक

— फणीश्वर नाथ रेणु

अर्थग्रहण संबंधी प्रश्नोत्तर

1. जाड़े का दिन। अमावस्या की रात-ठंडी और काली। मलेरिया और हैज़े से पीड़ित गाँव भयार्त शिशु की तरह थर-थर काँप रहा था। पुरानी और उजड़ी बाँस-फूस की झोंपड़ियों में अंधकार और सन्नाटे का सम्मिलित साम्राज्य! अँधेरा और निस्तब्धता!

अँधेरी रात चुपचाप आँसू बहा रही थी। निस्तब्धता करुण सिसकियों और आहों को बलपूर्वक अपने हृदय में ही दबाने की चेष्टा कर रही थी। आकाश में तारे चमक रहे थे। पृथ्वी पर कहीं प्रकाश का नाम नहीं। आकाश से टूटकर यदि कोई भावुक तारा पृथ्वी पर जाना भी चाहता तो उसकी ज्योति और शक्ति रास्ते में ही शेष हो जाती थी। अन्य तारे उसकी भावुकता अथवा असफलता पर खिलखिलाकर हँस पड़ते थे।

सियारों का क्रंदन और पेचक की डरावनी आवाज़ कभी-कभी निस्तब्धता को अवश्य भंग कर देती थी। गाँव की झोंपड़ियों से कराहने और कै करने की आवाज, 'हरे राम! हे भगवान!' की टेर अवश्य सुनाई पड़ती थी। बच्चे भी कभी-कभी निर्बल कंठों से 'माँ-माँ' पुकारकर रो पड़ते थे। पर इससे रात्रि की निस्तब्धता में विशेष बाधा नहीं पड़ती थी।

प्रश्न— (1) गाँव क्यों थर-थर काँप रहा था ?

(2) "अँधेरी रात चुपचाप आँसू बहा रही थी" का आशय स्पष्ट कीजिए।

(3) रात्रि की निस्तब्धता कैसे भंग हो जाती थी ?

(4) उपरोक्त गद्यांश में गाँव वालों की किस दशा का वर्णन किया गया है ?

उत्तर—(1) अमावस्या की काली ठंडी रात में मलेरिया और हैजे से पीड़ित होने के कारण गाँव थर-थर काँप रहा था।

(2) "अँधेरी रात चुपचाप आँसू बहा रही थी" का आशय है कि मलेरिया और हैजे से पीड़ित लोगों की तकलीफें रात्रि में बढ़ जाती थीं लोगों के घर किसी की मृत्यु हो जाती थी अतः लोगों की करुण सिसकियों और आहों को लेखक ने रात का आँसू बहाना कहा है।

(3) रात्रि की निस्तब्धता, सियारों के क्रंदन और पेचक की डरावनी आवाज से भंग हो जाती थी।

(4) उपरोक्त गद्यांश में गाँव वालों की, पीड़ा से कराहने, कै करने, हरे राम, हे भगवान; बच्चों द्वारा माँ-माँ की पुकार का हृदय विदारक कष्ट का वर्णन किया गया है।

2. एक बार वह 'दंगल' देखने श्यामनगर मेला गया। पहलवानों की कुश्ती और दाँव-पेंच देखकर उससे नहीं रहा गया। जवानी की मस्ती और ढोल की ललकारती हुई आवाज ने उसकी नसों में बिजली उत्पन्न कर दी। उसने बिना कुछ सोचे-समझे दंगल में 'शेर के बच्चे' को चुनौती दे दी।

'शेर के बच्चे' का असल नाम था चाँद सिंह। वह अपने गुरु पहलवान बादल सिंह के साथ, पंजाब से पहले-पहल श्यामनगर मेले में आया था। सुंदर जवान, अंग-प्रत्यंग से सुंदरता टपक पड़ती थी। तीन दिनों में ही पंजाबी और पठान पहलवानों के गिरोह के अपनी जोड़ी और उम्र के सभी पट्ठों को पछाड़कर उसने 'शेर के बच्चे' की टायटिल प्राप्त कर ली थी। इसलिए वह दंगल के मैदान में लँगोट लगाकर एक अजीब किलकारी भरकर छोटी दुलकी लगाया करता था। देशी नौजवान पहलवान, उससे लड़ने की कल्पना से भी घबराते थे। अपनी टायटिल को सत्य प्रमाणित करने के लिए ही चाँद सिंह बीच-बीच में दहाड़ता फिरता था।

श्यामनगर के दंगल और शिकार-प्रिय वृद्ध राजा साहब उसे दरबार में रखने की बातें कर रहे थे कि लुट्टन ने शेर के बच्चे को चुनौती दे दी। सम्मान-प्राप्त चाँद सिंह पहले तो किंचित, उसकी स्पर्धा पर मुसकुराया फिर बाज की तरह उस पर टूट पड़ा।

Scanned with CamScanner

प्रश्न— (1) शेर का बच्चा कौन था ?

(2) लुट्टन का शेर के बच्चे को चुनौती देने की क्या वजह थी ?

(3) चाँद सिंह के बारे में राजा साहब के क्या विचार थे ?

(4) चाँद सिंह ने लुट्टन पर कैसे वार किया ?

(5) चाँद सिंह लोगों को कैसे चुनौती देता था ?

उत्तर—(1) शेर का बच्चा पंजाब के पहलवान गुरु बादल सिंह का चेला (शिष्य) चाँद सिंह था।

(2) लुट्टन को जवानी की मस्ती और ढोल की ललकारती हुई आवाज ने उसकी नसों में बिजली उत्पन्न कर दी अतः वह शेर के बच्चे को चुनौती दे डाला।

(3) चाँद सिंह की प्रसिद्धि सुनकर राजा साहब उसे राज दरबार में रखने की सोच रहे थे।

(4) चाँद सिंह पहले मुस्कुराया फिर बाज की तरह उस पर टूट पड़ा।

(5) चाँद सिंह दंगल के मैदान में लंगोट पहनकर एक अजीब किलकारी भरकर छोटी दुलकी लगाता फिर बीच-बीच में दहाड़ कर चुनौती देता था।

3. दो सेर रसगुल्ला को उदरस्थ करके, मुँह में आठ-दस पान की गिलोरियाँ ठूँस, ठुड्डी को पान के रस से लाल करते हुए अपनी चाल से मेले में घूमता। मेले से दरबार लौटने के समय उसकी अजीब हुलिया रहती-आँखों पर रंगीन अबरख का चश्मा, हाथ में खिलौने को नचाता और मुँह से पीतल की सीटी बजाता, हँसता हुआ वह वापस जाता। बल और शरीर की वृद्धि के साथ बुद्धि का परिणाम घटकर बच्चों की बुद्धि के बराबर ही रह गया था उसमें।

दंगल में ढोल की आवाज सुनते ही वह अपने भारी-भरकम शरीर का प्रदर्शन करना शुरू कर देता था। उसकी जोड़ी तो मिलती ही नहीं थी, यदि कोई उससे लड़ना भी चाहता तो राजा साहब लुट्टन को आज्ञा ही नहीं देते। इसलिए वह निराश होकर, लंगोट लगाकर देह में मिट्टी मल और उछालकर अपने को साँड़ या भैंसा साबित करता रहता था। बूढ़े राजा साहब देख-देखकर मुस्कुराते रहते।

प्रश्न—(1) लुट्टन का खान-पान कैसा था ?

(2) लुट्टन की बुद्धि के विषय में लेखक ने क्या कहा है और क्यों ?

(3) दंगल में ढोल की आवाज सुनकर लुट्टन क्या करता था ?

(4) बूढ़े राजा साहब की खुशी का क्या कारण था ?

उत्तर—(1) लुट्टन के खान-पान में 2 सेर रसगुल्ला, आठ-दस पान की गिलोरियाँ थीं।

(2) लुट्टन के खान-पान से बल और शरीर की वृद्धि के साथ बुद्धि का परिणाम घट कर बच्चों की बुद्धि के बराबर रह गया था क्योंकि उसका मानसिक विकास कम हुआ। उसका प्रमाण था कि वह अब भी दंगल से खिलौने लेकर हाथ में नचाता था।

(3) दंगल में ढोल की आवाज सुनकर लुट्टन अपने भारी-भरकम शरीर का प्रदर्शन करने लग जाता था।

(4) लुट्टन को दंगल में लड़ने को कोई नहीं मिलता तब वह निराश होकर लंगोट लगाकर अपने देह में मिट्टी मल और उछालकर स्वयं को साँड़ या भैंसा साबित करने में लग जाता तो उसे देखकर राजा साहब मुस्कुराते और खुश होते थे।

4. रात्रि की विभीषिका को सिर्फ पहलवान की ढोलक ही ललकार कर चुनौती देती रहती थी। पहलवान संध्या से सुबह तक, चाहे जिस खयाल से ढोलक बजाता हो, किंतु गाँव के अर्द्धमृत, औषधि-उपचार-पथ्य-विहीन प्राणियों में वह संजीवनी शक्ति ही भरती थी। बूढ़े-बच्चे-जवानों की शक्तिहीन आँखों के आगे दंगल का दृश्य नाचने लगता था। स्पंदन-शक्ति-शून्य स्नायुओं में भी बिजली दौड़ जाती थी। अवश्य ही ढोलक की आवाज़ में न तो बुखार हटाने का कोई गुण था और न महामारी की सर्वनाश शक्ति को रोकने की शक्ति ही, पर इसमें संदेह नहीं कि मरते हुए प्राणियों को आँख मूँदते समय कोई तकलीफ नहीं होती थी, मृत्यु से वे डरते नहीं थे।

Scanned with CamScanner

थे, पर शिरीष भी क्या बुरा है! डाल इसकी अपेक्षाकृत कमजोर जरूर होती है, पर उसमें झूलनेवालियों का वजन भी तो बहुत ज्यादा नहीं होता। कवियों की यही तो बुरी आदत है कि वजन का एकदम खयाल नहीं करते। मैं तुंदिल नरपतियों की बात नहीं कह रहा हूँ, वे चाहें तो लोहे का पेड़ बनवा लें।

प्रश्न—(1) प्राचीन भारत में वृक्षों का क्या महत्व था ?

(2) वात्स्यायन ने वाटिका के संबंध में क्या बताया ?

(3) कवियों की किस बुरी आदत को बताया है ?

(4) वृक्ष वाटिका में किन-किन वृक्षों को लगाया जाता था ?

उत्तर—(1) प्राचीन भारत में रईस लोग मंगलजनक वृक्षों को अपनी वृक्षवाटिका की चारदीवारी में लगाया करते थे।

(2) वात्स्यायन ने वाटिका के संबंध में बताया कि सघन छायादार वृक्षों की छाया में ही झूला लगाया जाता था।

(3) कवियों द्वारा काव्य लेखन में कमजोर डालियों को झूला बनाने का वर्णन मिलता है किन्तु उस पर तुंदिल नरपतियों के वजन का ख्याल नहीं रखा जाता है।

(4) वृक्ष वाटिका में अशोक, अरिष्ट, पुन्नाग और शिरीष के वृक्षों का उपयोग किया जाता है।

3. फूलों की कोमलता देखकर परवर्ती कवियों ने समझा कि उसका सब-कुछ कोमल है! यह भूल है। इसके फल इतने मजबूत होते हैं कि नए फूलों के निकल आने पर भी स्थान नहीं छोड़ते हैं। जब तक नए फल-पत्ते मिलकर, धकियाकर उन्हें बाहर नहीं कर देते तब तक वे डटे रहते हैं। वसंत के आगमन के समय जब सारी वनस्थली पुष्प-पत्र से मर्मरित होती रहती है, शिरीष के पुराने फल बुरी तरह खड़खड़ाते रहते हैं। मुझे इनको देखकर उन नेताओं की बात याद आती है, जो किसी प्रकार ज़माने का रुख नहीं पहचानते और जब तक नयी पौध के लोग उन्हें धक्का मारकर निकाल नहीं देते तब तक जमे रहते हैं।

प्रश्न—(1) शिरीष के फलों की क्या विशेषता है ?

(2) लेखक ने शिरीष के फलों की तुलना किससे की है ?

(3) नेताओं की किस प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया गया है ?

(4) शिरीष फूल और फलों में क्या भिन्नता है ?

उत्तर—(1) शिरीष के फल इतने मजबूती से लगे होते हैं कि नये फूल और फल निकल आने पर भी अपना स्थान नहीं छोड़ते।

(2) लेखक ने शिरीष के फलों की तुलना नेताओं से की है।

(3) नेताओं की यह प्रवृत्ति होती है कि जब तक नयी पीढ़ी के लोग आकर उन्हें धक्का मारकर निकाल नहीं देते तब तक वे कुर्सी छोड़ना नहीं चाहते हैं।

(4) शिरीष के फूल जितने नाजुक और कोमल होते हैं उसके फूल उतने ही कठोर और मजबूती से लगे रहते हैं।

4. मैं सोचता हूँ कि पुराने की यह अधिकार-लिप्सा क्यों नहीं समय रहते सावधान हो जाती? जरा और मृत्यु, ये दोनों ही जगत के अतिपरिचित और अतिप्रामाणिक सत्य हैं। तुलसीदास ने अफ़सोस के साथ इनकी सच्चाई पर मुहर लगाई थी—"धरा को प्रमान यही तुलसी जो फरा सो झरा, जो बरा सो बुताना!" मैं शिरीष के फूलों को देखकर कहता हूँ कि क्यों नहीं फलते ही समझ लेते बाबा कि झड़ना निश्चित है! सुनता कौन है? महाकालदेवता सपासप कोड़े चला रहे हैं, जीर्ण और दुर्बल झड़ रहे हैं, जिनमें प्राणकण थोड़ा भी ऊर्ध्वमुखी है, वे टिक जाते हैं। दुरंत प्राणधारा और सर्वव्यापक कालाग्नि का संघर्ष निरंतर चल रहा है। मूर्ख समझते हैं कि जहाँ बने हैं, वहीं देर तक बने रहें तो कालदेवता की आँख बचा जाएँगे। भोले हैं वे। हिलते-डुलते रहो, स्थान बदलते रहो, आगे की ओर मुँह किए रहो तो कोड़े की मार से बच भी सकते हो। जमे कि मरे!

Scanned with CamScanner

18. (1) श्रम विभाजन और जाति-प्रथा
(2) मेरी कल्पना का आदर्श-समाज

—बाबा साहेब डॉ. भीमराव अंबेडकर

(1) श्रम विभाजन और जाति-प्रथा

अर्थग्रहण संबंधी प्रश्नोत्तर

1. जाति-प्रथा को यदि श्रम विभाजन मान लिया जाए, तो यह स्वाभाविक विभाजन नहीं है, क्योंकि यह मनुष्य की रुचि पर आधारित नहीं है। कुशल व्यक्ति या सक्षम-श्रमिक-समाज का निर्माण करने के लिए यह आवश्यक है कि हम व्यक्तियों की क्षमता इस सीमा तक विकसित करें, जिससे वह अपना पेशा या कार्य का चुनाव स्वयं कर सके। इस सिद्धांत के विपरीत जाति-प्रथा का दूषित सिद्धांत यह है कि इससे मनुष्य के प्रशिक्षण अथवा उसकी निजी क्षमता का विचार किए बिना, दूसरे ही दृष्किोण जैसे माता-पिता के सामाजिक स्तर के अनुसार, पहले से ही अर्थात् गर्भधारण के समय से ही मनुष्य का पेशा निर्धारित कर दिया जाता है।

प्रश्न—(1) श्रम विभाजन किस पर आधारित नहीं है ?

(2) सक्षम-श्रमिक-समाज का निर्माण किस प्रकार हो सकता है ?

(3) जाति प्रथा का दूषित सिद्धांत क्या है ?

(4) गद्यांश का शीर्षक एवं लेखक का नाम लिखिए।

Scanned with CamScanner

उत्तर—(1) श्रम विभाजन मनुष्य की रुचि पर आधारित नहीं है।

(2) सक्षम-श्रमिक-समाज के निर्माण के लिए आवश्यक है कि हम व्यक्तियों की क्षमता इस सीमा तक विकसित करें जिससे वह अपने पेशा या कार्य का चुनाव स्वयं कर सके।

(3) जाति-प्रथा का दूषित सिद्धांत यह है कि इसमें मनुष्य के प्रशिक्षण या उसकी निजी क्षमता का विचार किए बिना दूसरे ही दृष्टिकोण जैसे, माता-पिता के सामाजिक स्तर के अनुसार पहले से ही अर्थात् गर्भधारण के समय से ही मनुष्य का पेशा निर्धारित कर दिया जाता है।

(4) गद्यांश का शीर्षक 'श्रम विभाजन और जाति प्रथा', लेखक-डॉ. भीमराव अंबेडकर।

2. श्रम विभाजन की दृष्टि से भी जाति-प्रथा गंभीर दोषों से युक्त है। जाति-प्रथा का श्रम विभाजन मनुष्य की स्वेच्छा पर निर्भर नहीं करता। मनुष्य की व्यक्तिगत भावना तथा व्यक्तिगत रुचि का इसमें कोई स्थान अथवा महत्व नहीं रहता। 'पूर्व लेख' ही इसका आधार है। इस आधार पर हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि आज के उद्योगों में गरीबी और उत्पीड़न इतनी बड़ी समस्या नहीं जितनी यह कि बहुत से लोग 'निर्धारित' कार्य को 'अरुचि' के साथ केवल विवशतावश करते हैं। ऐसी स्थिति स्वभावतः मनुष्य को दुर्भावना से ग्रस्त रहकर टालू काम करने और कम काम करने के लिए प्रेरित करती है। ऐसी स्थिति में जहाँ काम करने वालों का न दिल लगता हो न दिमाग, कोई कुशलता कैसे प्राप्त की जा सकती है। अतः यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो जाता है कि आर्थिक पहलू से भी जाति-प्रथा हानिकारक प्रथा है। क्योंकि यह मनुष्य की स्वाभाविक प्रेरणारुचि व आत्म-शक्ति को दबा कर उन्हें अस्वाभाविक नियमों में जकड़ कर निष्क्रिय बना देती है।

प्रश्न—(1) श्रम विभाजन की दृष्टि से जाति प्रथा के कौन से दोष हैं।

(2) लेखक के अनुसार सबसे बड़ी समस्या क्या है ?

(3) किसी कार्य में कुशलता न प्राप्त होने का क्या कारण है ?

(4) मनुष्य किन परिस्थितियों में निष्क्रिय बन जाता है ?

(5) लेखक क्या सिद्ध करना चाहता है ?

उत्तर—(1) श्रम विभाजन की दृष्टि से जाति प्रथा का प्रमुख दोष है, कि वह मनुष्य की स्वेच्छा पर निर्भर नहीं रहता, मनुष्य की व्यक्तिगत भावना व रुचि का कोई स्थान नहीं।

(2) लेखक के अनुसार सबसे बड़ी समस्या लोगों के लिए निर्धारित कार्य अरुचि के साथ विवशतावश से करना है जो मनुष्य को दुर्भावना से ग्रस्त रहकर टालू काम करने या कम काम करने के लिए प्रेरित करती है।

(3) किसी कार्य में कुशलता न प्राप्त करने का कारण है कि निर्धारित कार्य में व्यक्ति का दिल और दिमाग न लगना है।

(4) जाति आधारित श्रम विभाजन मनुष्य की स्वाभाविक प्रेरणा रुचि व आत्मशक्ति को दबा कर अस्वाभाविक नियमों से जकड़ देती है। तब मनुष्य निष्क्रिय हो जाता है।

(5) देश की गरीबी और बेरोजगारी का प्रमुख कारण जाति आधारित श्रम विभाजन है लेखक यही सिद्ध करना चाहता है।

(2) मेरी कल्पना का आदर्श-समाज

1. जातिप्रथा के पोषक, जीवन, शारीरिक-सुरक्षा तथा संपत्ति के अधिकार की स्वतंत्रता को तो स्वीकार कर लेंगे, परंतु मनुष्य के सक्षम एवं प्रभावशाली प्रयोग की स्वतंत्रता देने के लिए जल्दी तैयार नहीं होंगे, क्योंकि इस प्रकार की स्वतंत्रता का अर्थ होगा अपना व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता किसी को

Scanned with CamScanner

नहीं है, तो उसका अर्थ उसे 'दासता' में जकड़कर रखना होगा, क्योंकि 'दासता' केवल कानूनी पराधीनता को ही नहीं कहा जा सकता। 'दासता' में वह स्थिति भी सम्मिलित है जिससे कुछ व्यक्तियों को दूसरे लोगों के द्वारा निर्धारित व्यवहार एवं कर्तव्यों का पालन करने के लिए विवश होना पड़ता है। यह स्थिति कानूनी पराधीनता न होने पर भी पाई जा सकती है। उदाहरणार्थ, जाति प्रथा की तरह ऐसे वर्ग होना संभव है, जहाँ कुछ लोगों की अपनी इच्छा के विरुद्ध पेशे अपनाने पड़ते हैं।

प्रश्न—(1) जाति-प्रथा के पोषकों की स्वीकृति-अस्वीकृति किन चीजों में है ?

(2) 'दासता' क्या है ?

(3) जाति-प्रथा के पोषक किस बात की स्वतंत्रता नहीं देते हैं ?

(4) कानूनी पराधीनता न होने पर भी अरुचि का पेशा क्यों अपनाना पड़ता है ?

उत्तर—(1) जाति-प्रथा के पोषकों की स्वीकृति जीवन, शारीरिक-सुरक्षा तथा संपत्ति के अधिकार की रहती है, किन्तु व्यवसाय चुनने की अस्वीकृति होती है।

(2) दासता में जकड़कर रखना होता है जिसमें कुछ व्यक्तियों को दूसरे लोगों के द्वारा निर्धारित व्यवहार एवं कर्त्तव्यों का पालन करने के लिए विवश होना पड़ता है।

(3) जाति-प्रथा के पोषक लोगों को अपनी इच्छा व रुचि का व्यवसाय चुनने की स्वतंत्रता नहीं देते हैं।

(4) कानूनी पराधीनता न होने पर भी अरुचि का पेशा सामाजिक नियमों के तहत अपनाना पड़ता है क्योंकि उनके लिए निर्धारित कार्य कोई और नहीं कर सकता जैसे मैला साफ करने का कार्य।

2. व्यक्ति विशेष के दृष्टिकोण से, असमान प्रयत्न के कारण, असमान व्यवहार को अनुचित नहीं कहा जा सकता। साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमता का विकास करने का पूरा प्रोत्साहन देना सर्वथा उचित है। परंतु यदि मनुष्य प्रथम दो बातों में असमान है, तो क्या इस आधार पर उनके साथ भिन व्यवहार उचित हैं? उत्तम व्यवहार के हक की प्रतियोगिता में वे लोग निश्चय ही बाजी मार ले जाएँगे, जिन्हें उत्तम कुल, शिक्षा, पारिवारिक ख्याति, पैतृक संपदा तथा व्यावसायिक प्रतिष्ठा का लाभ प्राप्त है। इस प्रकार पूर्ण सुविधा संपन्नों को ही 'उत्तम व्यवहार' का हकदार माना जाना वास्तव में निष्पक्ष निर्णय नहीं कहा जा सकता। क्योंकि यह सुविधा संपन्नों के पक्ष में निर्णय देना होगा। अतः न्याय का तका ा यह है कि जहाँ हम तीसरे (प्रयासों की असमानता, जो मनुष्यों के अपने वश की बात है) आधार पर मनुष्यों के साथ असमान व्यवहार को उचित ठहराते हैं, वहाँ प्रथम दो आधारों (जो मनुष्य के अपने वश की बातें नहीं हैं) पर उनके साथ असमान व्यवहार नितांत अनुचित है। और हमें ऐसे व्यक्तियों के साथ यथासंभव समान व्यवहार करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, समाज की यदि अपने सदस्यों से अधिकतम उपयोगिता प्राप्त करनी है, तो यह तो संभव है, जब समाज के सदस्यों को आरंभ से ही समान अवसर एवं समान व्यवहार उपलब्ध कराए जाए।

प्रश्न—(1) लेखक किस व्यवहार को उचित और अनुचित नहीं मानता है ?

(2) किस प्रकार के लोग प्रतियोगिता में बाजी मार लेंगे ?

(3) समाज अपने सदस्यों से अधिकतम उपयोगिता कैसे प्राप्त कर सकता है ?

(4) न्याय का तकाज़ा क्या है ?

उत्तर—(1) लेखक के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमता के अनुसार विकास करने के लिए प्रोत्साहन देना सर्वथा उचित है। व्यक्ति विशेष के दृष्टिकोण से असमान प्रयत्न के कारण असमान व्यवहार को अनुचित नहीं मानता है।

(2) उत्तम कुल, शिक्षा, पारिवारिक ख्याति, पैतृक संपदा तथा व्यावसायिक प्रतिष्ठा प्राप्त लोग बाजी मार लेंगे।

Scanned with CamScanner